वक्तव्य।

१

निज पूर्वपुरुषों के गुणों को भूल जो जाते नहीं,
तो आज हम इस भांति पद-पद दुख अमित पाते नहीं।
पर इस समय निश्चेष्ट हो, समुचित नहीं सोना हमें,
आपत्ति में पड़ चाहिये कातर नहीं होना हमें॥

२

हम कौन थे? अब क्या हुए? यह सोच कर अपने लिये,
हम को हमारे दुर्गुणों पर रोष लाना चाहिए।
कर्त्तव्य अपना सोच कर स्थिर लक्ष्य करना चाहिए,
फिर निज-हृदय में शक्ति, साहस, शौर्य भरना चाहिये॥

३

करना ग्रहण निज पूर्वजों के सुयश के व्यापार का,
है पतित देशों को सुनिश्चित मार्ग यह उद्धार का।
अतएव हम निजपूर्वजों के चरित को धारण करें,
करते हुए अनुसरण उनका, देश की दुर्गति हरें॥

४

निजपूर्वजों के चरित का जिस को नहीं अभिमान है,
उस जाति का जीना जगत में मित्र! मरण समान है।
रखती सदा जो पूर्वजों के सद्गुणों का ध्यान है,
उस जाति का निश्चय समझलो शीघ्र ही उत्थान है॥

(मेवाड़-गाथा)

गुरु दीपक, गुरु देवता, गुरु बिन घोर अंधार।
जे गुरुवाणी वेगला*, ते रड़वाड़िया+ संसार॥

---

* वचन को न मानना
+ संसार में गोते खाना।

भूमिका।

——:o.——

१—विक्रम की दसवीं शताब्दि से चौदहवीं शताब्दि के अन्त तक का समय जैनश्वेताम्बर-मध्यम-इतिहास का सुवर्णिक (Golden-age) कहा जावे तो अत्युक्ति नहीं होगी। गुजरात, मारवाड़ और सिन्ध कांगड़ा आदि प्रांतों में जैन धर्म उन्नति के उच्चशिखर पर पहुंचा हुआ था। जैनधर्म को इस गौरव को प्राप्त कराने के निमित्तकारण अनेक जैन महात्मा और श्रावक थे। कुमारपाल, वस्तुपाल और तेज· पाल के घोर परिश्रम ने जैनधर्म को पश्चिम भारतवर्ष में एक दृढ़ राजनैतिक सत्ता बना दी थी।

२—अभयदेवसूरि, हेमचन्द्राचार्य, रामचन्द्र, मुनिचन्द्र, जगच्चन्द्र आदि आचार्यों ने उत्तम २ ग्रंथ रचकर जैनों को किसी, साहित्यविभाग में अन्य मत के ग्रंथों के आधीन नहीं रक्खा। जिनवल्लभसूरि, जिनदत्तसूरि आदि आचार्यों ने अनेक अन्य मतानुयायिओं को जैनधर्म में लाकर जैनों की संख्या में बहुत वृद्धि की। इसी समय में विमल-शाह, तेजपाल, वस्तुपाल आदि धनाढ्य गृहस्थों ने आबु गिरनार आदि तीर्थस्थानों में मंदिर बनवाकर जैनशिल्प के विकास में बड़ी भारी सहायता की। इन बातों से हमारे

पाठकों को भली भांति ज्ञात हो गया होगा कि जिस समय में हमारे चारित्रनायक पैदा हुए थे वह समय जैनधर्म के इतिहास में सुवर्णाक्षरों में लिखने योग्य है ।

३-शोक का विषय है कि हमारे चरित्रनायक एक महान् प्रभावशाली आचार्य होने पर भी उनके जीवनचरित्र की ऐतिहासिक सामिग्री जितनी कि चाहिये, प्राप्त नहीं होती । किन्तु हमको बिल्कुल निराश नहीं होना चाहिये । क्योंकि इनके चारित्र की सामिग्री को संग्रह करने का अभी तक कोई उद्यम नहीं किया गया है । संभव है कि प्राचीन ग्रंथ भण्डारों में ढूंढने से पूरी २ सामिग्री प्राप्त हो जाय ।

४—प्राचीन समय के प्रत्येक धार्मिक नेताओं के चरित्र की घटनाएं दो भागों में विभक्त हो सकती हैं एक ऐतिहासिक, दूसरी चमत्कारिक । ऐतिहासिक घटनाओं को प्रत्येक मनुष्य स्वीकार कर सकता है दूसरी घटनाओं को उक्त नेताओं के अनुयायिमात्र ही स्वीकार कर सकते हैं । इस घटनाविभाग की अपेक्षा से अगर हम अपने चरित्रनायक के जीवनचरित्र की घटनाओं को देखें तो हम को यह अवश्य कहना होगा कि उन में चमत्कारिक अंश कुछ अधिक है । उदाहरण के निमित हमारे चरित्रनायक के जन्म दीक्षा देवलोक आदि के संवत् तथा साहित्य की सेवा करना, जैनधर्म का प्रचार करना आदि ऐतिहासिक घटनाएं हैं । योगनियों का सिद्ध करना उनको वर देना मृतगाय

और मृतयुवक में देवता का प्रवेश कराना चमत्कारिक घटनाएं हैं। ऐसी घटनाएं अन्य जैनाचार्यों के जीवनचरित्रों में भी देखने में आती हैं। नागपुरीय तपगच्छ के स्थापक पार्श्वचन्द्र जी के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उन्होंने जोगिनी और वीरों को सिद्ध किया था। ऐसा ही उल्लेख जीवदेवसूरि के सम्बन्ध में दृष्टिगोचर होता है।

५—हमारे चरित्रनायक के जीवन को पढ़ने से विदित होगा कि बहुधा उनका भ्रमण सिन्ध, मारवाड़ में हुआ है और यह भी मालूम होता है कि उस समय में मुलतान उच्च (रियासत भावलपुर) भटिंडा, मारोठ, दिल्ली, लाहोर आदि नगर खरतरगच्छ के केन्द्र थे।

६—चरित्र से यह भी विदित होगा कि जैनधर्मके प्रचार करने में हमारे चरित्रनायक ने एक बहुत बड़ा भाग लिया है यहां पर इतना बता देना उचित है कि जैनधर्म एक प्रचारकधर्म है और इसकी वृत्ति सदैव से उदार रही है इस धर्मके नेताओं की घोषणा यही रहीहै कि—"ज्ञानदर्शन चारित्राणि मोक्षमार्गः"—इसी उदारवृत्ति का परिणाम है कि ओसवाल श्रीमाल पोरवाड़ संस्थाएं इस समय दृष्टिगोचर होती हैं वह दिन आधुनिक—जैन-इतिहास में सुवर्णाक्षरों में लिखने योग्य होगा, जिस दिन हमारे नेता आपस के कदाग्रह और भेदभाव को त्याग कर "सविजीव करूं शासनरसी" की घोषणा देते हुए उदारभाव से जैन-

धर्म को प्रचारकवर्ग की उच्च श्रेणी पर फिर आरूढ़ करेंगे।

मुझे इस समय अपने परम हितैषी श्रीमान् बाबू उमराव सिंह टांक बी० ए० एल० एल० बी० का भी धन्यवाद करना चाहिये, जिनकी सहायता से मैं इस पुस्तक की रचना में कृतकार्य हुआ हूं। आप ने इस पुस्तक के विषय में मुझे बहुत कुछ सहायता प्रदान की है। बाबू उमरावसिंह जैनसाहित्य के अच्छे ज्ञाता हैं और अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर के भी आप जैनमत में इतनी ही श्रद्धा रखते हैं जो एक जैनधर्मावलम्बी के लिये आवश्यक है। यदि पाठकों ने इस पुस्तक द्वारा कुछ भी शिक्षा प्राप्त की तो मैं अपने इस श्रम को सफल समझूंगा। क्योंकि महात्माओं के चरित्र से हम अपने चरित्रों का सुधार कर सकते हैं। यह मेरी प्रथम ही रचना है अतः यदि कोई भूल चूक रह गई हो तो विज्ञ महानुभाव क्षमा प्रदान करेंगे। और यदि कोई भाई मेरी किसी त्रुटि पर ध्यान दिलावेंगे तो मैं उनका और भी कृतज्ञ हूंगा।

दिल्ली
ता० १ फरवरी सं० १९१९

धनपतिसिंह
भनसाली

खरतर गच्छ पट्टावली

१ चरम तीर्थंकर श्री मनू महावीर स्वामी (वर्द्धमानस्वामी) निर्वाण विक्रम संवत् से ४७० वर्ष पूर्व कार्तिक वदि अमावश।

२ सुधर्मा स्वामी	१२ सुस्थित सूरि
३ जंबू स्वामी	१३ इंद्र दिन्न सूरि
४ प्रभव स्वामी	१४ दिन्न सूरि
५ शय्यं भव सूरि	१५ सिंह गिरि सूरि
६ यशो भद्र सूरि	१६ वज्र स्वामी सूरि
७ संभूति विजयसूरि	१७ वज्र सैन सूरि
८ भद्र बाहू सूरि	१८ चंद्र सूरि
९ थूलभद्र सूरि	१९ समंत भद्र सूरि
१० आर्य महागिरि सूरि	२० वृद्ध देव सूरि
११ सुहस्ति सूरि	२१ प्रद्योतन सूरि

२२ मान देव सूरि
२३ मानतुंग सूरि
२४ वीर सूरि
२५ जयदेव सूरि
२६ देवानंद सूरि
२७ विक्रम सूरि
२८ नर सिंह सूरि
२९ समुद्र सूरि
३० मान देव सूरि
३१ विबुध प्रभ सूरि
३२ जया नंद सूरि
३३ रवि प्रभ सूरि
३४ यशो देव सूरि
३५ विमलचंद्र सूरि
३६ देव सूरि
३७ नेमि चंद्र सूरि
३८ उद्योतन सूरि
३९ वर्द्धमान सूरि
४० जिनेश्वर सूरि
४१ चंद्र सूरि
४२ अभय देव सूरि
४३ जिन वल्लभ सूरि

४४ जिन दत्तसूरि (हमारे चरित्र नायक.)
देवलोक वि० सं० १२११ अर्थात श्री महावीर
स्वामी के निर्वाण से १६८० वर्ष पश्चात ।

जंगम युग प्रधान भट्टारक

श्री जिनदत्त सूरिजी महाराज

का

संक्षिप्त जीवन चरित्र ।

चरम तीर्थंकर श्रीमन् महावीर स्वामी के ४४ वें पट्टधर आपही हुए हैं। आप वृहत् खरतरगच्छ में बड़े प्रभाविक आचार्य हुए हैं। आपका जन्म सं० ११३२ में धंधूका नगर में [जो कि गुजरात में है] वहां के हुंबड़ गोत्र वांछिग नाम के मंत्रीस्वर की धर्म पत्नी वाहड़ देवी की कुक्षि से हुआ था। आप के माता पिता ने जन्म महोत्सव करके विधि

अनुसार आपका नाम सोमचंद्र रक्खा। आप की मातेश्वरी ने बड़ी सावधानी से आपका लालन पालन किया । जब आपकी आयु ५ वर्ष की हुई तब सांसारिक पृथानुसार आपको पढ़ने को बिठाया । पूर्व जन्म के ज्ञानावर्णी कर्म का क्षयउपसम होने के कारण आप थोड़े ही समय में अच्छे विद्यमान् हो गये।

विक्रम सम्वत् ११४१ में श्री वाचक धर्म देव गणिजी का उपदेश सुन कर आपको वैराग्य उत्पन्न हुआ, अस्तु आपने बालअवस्था में ही सांसारिक सुखों को तुच्छ जानकर मात पिता की आज्ञा लेकर सम्वत् ११४१ में श्री वाचक धर्म देव गणि जी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की । इस समय आपका नाम प्रबोध चंद्र गणि रक्खा गया और जैन शास्त्रों का

अध्ययन किया, २० वर्ष की अवस्था में ही बड़े गीतार्थ जैन साधू बन गये । इस अवसर में गुरु महाराज सारंगपुर नगर में कुमार पाल उपाध्याय को अंत समय का अनशन करा कर भली प्रकार धर्माराधन कराया जिस से उपरोक्त उपाध्याय मर कर देवता उत्पन्न हुआ। अवधि ज्ञान से गुरु महाराज को अपना उपकारी जानकर यत्किंचित् बदला देने को गुरु महाराज के पास आया और बंदना नमस्कार कर के बैठ गया, उस समय गुरु महाराज अपने गुरु श्री वाचक धर्म देव गणि के पास बैठे हुए थे, वह देवता गुरु महाराज से विनयपूर्वक कहने लगा, कि हे माहानुभाव मुनि ! आप आचार्य शीघ्र होंगे परन्तु कुछ उपयोग रखियेगा, आप के सूरि पद के

होने के ३ तीन मुहूर्त निकलें गे। प्रथम मुहूर्त में मरणांत कष्ट होगा, और दूसरे में गच्छ भेद बहुत से होंगे, इन कारणों से आप तीसरे में सूरि मंत्र ग्रहण करियेगा, शासन में उन्नति होगी, इतना कह कर देव स्वस्थान को चला गया। परन्तु होनहार बलवान है। आप को आचार्यपद सम्वत ११६९ वैसाख वदि छठ शनिवार को संध्या लग्नमें प्राप्त हुआ, श्री जिन देव भद्राचार्य ने सूरि मंत्र दिया। इस समय दूसरा ही मुहूर्त था। आप का नाम जिन दत्त सूरि रक्खा गया। आचार्य पदवी प्राप्त होने के पश्चात जो कुछ परोपकार किये हैं, उन का संक्षिप्त वर्णन पाठकों के मनो-रंजनार्थ दिया जाता है॥

आचार्य पदवी जब आप को प्राप्त हुई

उस समय परम वैराग्य से विभूषित होकर " सवि जीव करूं सासन रसी, ऐसी भाव दया मन उलसी " वो वीतराग सूत्र पठन करते हुए ग्रमानुग्राम बिहार करते और भव्यात्माओं को प्रतिबोध देते हुए उज्जैनी नगरि में पहुंचे, जहां महाकाल का एक जग विख्यात मंदिर* था जिसमें पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान थी, इसही मंदिर में एक स्तूप था जिस में विद्याम्नाय की पुस्तकें

महा काल का मंदिर * इस मंदिर में सिद्ध सैन दिवाकर ने श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा कल्याण मंदिर स्तोत्र द्वारा प्रगट की थी। उक्त स्तोत्र का ११ श्लोक " यस्मिन् हरप्रभृतयोऽपि हत प्रभावा: " पढ़ा उस समय देवाधिदेव श्री पार्श्व नाथ स्वामी का बिम्भ महा देव की पिंडी फट कर प्रगट हुआ था, और यहां विद्याम्नाय की पुस्तकें एक स्तूप बना कर रखी गई थीं।

रखी थीं, गुरु महाराज ने उस स्तूप में से एक पुस्तक विद्याबल से ग्रहण की। इस ही प्रकार एक पुस्तक चित्रकूट (चितौड़) के श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्वामी के मंदिर के स्तुप में से प्राप्त की।

गुरु महाराज ने विधि पूर्वक ३ तीन क्रोड़ माया वीज मंत्र के जाप का अनुष्ठान किया, जाप में विघ्न डालने के योगिनियों ने अनेक विचार किये परन्तु गुरु महाराजका पुण्य प्रबल होने से देवताने गुरु महाराज को सूचना दे दी। सूचना पाने के पश्चात गुरु महाराज ने श्रावकों से कहा कि आज व्याख्यान में ६४ स्त्रियां आवेंगी, उन के संमानार्थ ६४ पट्टे रखो, उन पट्टोंको गुरु महाराज ने मंत्रित कर दिया, और कह दिया कि जिस समय ६४

नई श्राविकाएं आवें उन को इन के ऊपर बैठा देना। गुरु महाराज ने व्याख्यान नियमानुकूल आरंभ कर दिया। जिस समय ६४ योगिनियां ६४ स्त्रियों के वेष में आईं, उस समय श्रावकों ने उन को बड़े आदर संमान सहित उन पट्टों पर बैठा दिया, व्याख्यान समाप्त होने पर योगिनियों ने उठना चाहा तो वह उठ नहीं सकीं अर्थात वहां ही स्थंभित हो गईं। सब यह चमत्कार देख कर आश्चर्य करने लगे, और योगिनियां नम्र शीस होकर कहने लगीं "हे भगवन्! हम तो आप को चलायमान करने आईं थीं परँतु आप ने तो हमें ही निश्चल कर दिया, हे भगवन्! आज से हम आप के आधीन हैं भविष्य में हम आपकी आज्ञानुसार कार्य

किया करेंगी, कृपा कर हम को इस बंधन से मुक्त कीजिये"। कृपासागर गुरु महाराज ने छोड़ने से प्रथम कहा कि देखो भविष्य में तुम हमारी परम्परा के आचार्य तथा साधू को कभी भी दुःख न देना और न धोके में लेना। योगिनियोंने कहा 'तथास्तु' और इसके अतिरिक्त हम प्रसन्न होकर ७ सात बरदान देती हैं:—

१--आप का श्रावक तेजस्वी होगा। २--प्रायः निर्धन न होगा। ३--मरकी इत्यादि से अकाल उसकी मृत्यु न होगी। ४--अखंड ब्रह्मचारिणी साध्वीको ऋतु न आवेगा। ५--आप के नाम से ही विघ्न उपसर्ग बिजली आदि का दूर होगा। ६--सिंध देश में गया श्रावक प्रायः धनवंत होगा। ७-मालूम नहीं

हुआ । परन्तु आचार्य, साधु, श्रावकों को इतना और विशेष करना होगा, जिससे सात बरदान फलीभुत होवें ।

१—आप का पट्टधर २००० सूरिमंत्र का जाप करे ।

२—साधु दो हजार नवकार गुणे ।

३—श्रावक प्रभात और संध्या को साते-स्मरण पढ़े अथवा सुने ।

४—एक नवकार एक उवसग्गहरं ऐसी १०८ बार की ३ खीचड़ी की माला गुणे ।

५—श्रावक एक मास में दो आंविल करे ।

६—साधु निरन्तर यथाशक्ति एकाशना तप करे ।

७—आचार्य पंचनदी के अधिष्टायकों का साधन करे । योगिनियें जाने के समय और

भी कहने लगीं "हे भगवन् ! आप के संतानीय सूरि दिल्ली [कुतुब] अजमेर, भरुच, उज्जैन उच्च नगर, मुलतान, लाहौर में बिना पूर्ण शक्ति रात्रि वास न करें ऐसा कह कर अदृश्य होगईं।

अजमेर में एक समय पाक्षिक प्रतिक्रमण श्रावक कर रहे थे उस समय बिजली बड़े वेग से कड़कने लगी, प्रतिक्रमण वालों का भय से ध्यान भंग होने लगा, उस समय गुरु महाराज ने मंत्र बल से उस को आकर्षित कर अपने पात्र के नीचे दबा दी, प्रतिक्रमण बाद उस को छोड दी, जिस से देवाधिष्ठित विद्युत् से आवाज हुई कि आप का नाम स्मरण करने वाले पर मैं नहीं गिरूंगी।

परम कृपालु गुरु महाराज विहार करते

करते बड नगर में आये और उन के अतुल महिमा से जैन शासन का प्रभाव बढ़ता देख कर द्वेषियों ने जैन की निन्दा करने को मृत गौ को गुप्त रीति से जैन मंदिर के द्वार पर डाल दी, और झूठमूट कहने लगे कि जैन गौ हत्या करते हैं, जैन घबराये हुए गुरु के पास आये, गुरु महाराज ने एक व्यन्तर देव को गौके अंदर प्रवेश कराकर उसको जीवित कर द्वेशियो के मंदिर में भेजदी, वहां मृत होकर शिवलिंग पर गिर पड़ी। दूसरों को अरोप देने वाले अपने पर कलंक आता देख कर घबरा उठे। गौ उठ नहीं सकती थी जिस से द्वेषभाव छोड़ कर गुरुजी के चरण कमल में आन कर पड़ गये और क्षमा मांगने लगे। परिणाम यह हुआ कि उसी समय गौ उठ

कर निकल गई और दूर जाकर गिर पड़ी, वो इस चमत्कारसे चकित होकर बोले, हे गुरुवर! आप के हम आज से सेवक हैं, अब कोई आचार्य यहां पर आवेंगे तो हम स्वयम् उन का प्रवेश महोत्सव करेंगे। गुरु महाराज ने उन को जैन बना कर जैन मंदिर में गुण ग्राम करना बताया और पूजा प्रमार्जनादि करने और दक्षिणादि लेने की आज्ञा दी, इस प्रकार गंध्रप (गांधर्व) नाम से प्रसिद्धि जाति की उत्पत्ति हुई है।

एक दफे गुरु महाराज उच्च नगर में गये वहां के श्रावकों ने गुरु महाराज का नगर प्रवेश उत्सव किया। उस समय वहां के मुगल अधिकारी का पुत्र घोड़े पर चढ़ा आ रहा था, घोड़ेके चौंक जाने के कारण

वह युवक घोड़े से गिर कर मर गया। इस से श्रावकों को बहुत चिंता हुई। श्रावकों की चिंता दूर करने और जैन शासन की शोभा बढाने के लिये उस मुगल पुत्र के शरीर में व्यंतर देवता को प्रवेश करा दिया, जिस से वह युवक जीवित हो गया। इस चमत्कार से वहां के मुगल अधिकारी ने बहुत उपकार माना और गुरु महाराज का नगर प्रवेश बडे उत्साह से कराया। इसी प्रकार वह युवक ६ मास तक जीवित रहा।

गिरनार पर्वत पर नाग देव श्रावक इष्ट सिद्धि के लिए अट्ठम तप करके अम्बिका देवी का आराधन किया। देवी के प्रत्यक्ष दर्शन देने पर नाग देव श्रावक ने शासन प्रभाविक युग प्रधान का पता पूछा, देवीने सु-

वर्ण अक्षरों में उसके हाथ में एक श्लोक लिख दिया और कहा कि पढ़ने वाला ही शासन प्रभावक युग प्रधान होगा। नाग देव ने अपना हाथ अनेक आचार्यों को दिखाया परन्तु कोई उस श्लोक को न पढ़ सका। अनुक्रमे अनहिलवाड पाटण पहुंचा वहां जिनदत्त सूरिजी महाराज से भेट हुई और उनको अपना हाथ दिखाया, गुरु महाराज ने जो उसका हाथ देखा तो उस में जो लिखा था, वह गुरु महाराज के संबंध का था, इस कारण से गुरु महाराज ने उसके हाथ पर वासक्षेप कर दी और अपने शिष्य को आज्ञा दी कि इस श्रावक के हाथ पर जो कुछ लिखा है उसे पढ़कर सुनाओ गुरु महाराज की आज्ञानुसार जो शिष्यने पढ़ा तो यह श्लोक था

दासानुदासा इव सर्वदेवा,
यदीय पादाब्जतले लुठंति ।
मरुस्थली कल्पतरुः स जीयाद्-
युगप्रधानो जिनदत्त सूरिः ॥१॥

अर्थ—जिनके चरणों में सब देव दासों के दास की तरह लोटते हैं अर्थात् सेवा करते हैं। जो मरुस्थल (मारवाड़) की भूमि के विशे कल्पवृक्ष के समान हैं और इस युग में प्रधानआचार्य हैं वह जिनदत्तसूरि जयवंता हो।

नागदेव श्रावक ने देवता के कथनानुसार गुरु महाराज को पाया और नाम भी गुरु महाराज का ही उस श्लोक में लिखा निकला इसी से उक्त श्रावक को गुरु महाराज

पर अत्यन्त भक्तिभाव उत्पन्न होगया। उस समय से गुरु महाराज के नाम के साथ में युग प्रधान की उपाधि संयुक्त हो गई॥

ग्रामानुग्राम विहार करते हुए एक बार आप मुलतान पधारे वहां के श्रावकों ने बड़ी भक्तिभाव से आपका स्वागत किया, अनेक लोग आप की विद्वत्ता और गुणों से मुग्ध होकर आप की प्रशंसा करने लगे। दैवयोग से अनहिलवाड़ पाटन का रहनेवाला अंबड़ नामक श्रावक किसी कारणवश वहां पर उपस्थित था, वह आपकी कीर्त्ति और महिमा को देख कर ईर्षा करने लगा। एक दिन गुरु महाराज से घमंड के साथ बोला कि यद्यपि आप मेरे पाटन में इस प्रकार महोत्सव से आवें तो मैं आपको चमत्कारी मानूं। गुरु

महाराज ने अत्यन्त नर्मी से उत्तर दिया। हे भद्रक! जिसका पुण्य प्रबल होता है उसको सब जगह मान मिलताहै। पाठकगण कर्म की गति विचित्र है। कालान्तर में महाराज अनहिलवाड़ पाटन गये और आपका नगरप्रवेश पाटननिवासियों ने बड़ी धूमधाम से किया द्वेषी अंबड़ भी उस समय मौजूद था, परन्तु उस समय कर्मयोग से उसकी हालत पहिले जैसी न थी। मुख पर दरिद्रता और फिटकार बरस रही थी किन्तु अब भी उसने द्वेषभावना को नहीं छोड़ा, कपट से गुरु महाराज से पिछले अपराध की क्षमा मांगी और अपनेको आपका परमभक्त जाहिर करने लगा, सरल परिणामी गुरुमहाराज को दुष्ट की बातों पर विश्वास आ गया। इस दुष्ट ने एक दिन

समय पाकर आपको विषमिश्रित शक्कर का पानी उपवास के पारने पर बहरा दिया। गुरु महाराज के पानी सेवन करते ही विषने अपना असर करना आरम्भ किया। परन्तु "जाको राखे साइयां मार न सकि है कोय" कहावत के अनुसार श्रावकों को शीघ्र ही आपको विषपान कराने का पता चल गया। भनसालीय-गोत्री नगर सेठ आभूशाहने विष-अपहार जड़ी मंगा कर गुरु महाराज को सेवन कराई जिस से विष का असर तुरंत ही नष्ट होगया जब यह गुप्तभेद प्रगट हुवा तो अंबड़ ऐसा लज्जित हुवा कि शीघ्र ही इस लोक से कूंचकर गया।

एक समय आप विक्रमपुर गये, वहां उस समय प्लेग (मरकी) का भयंकर उपद्रव

होरहा था बहुत से जैन और अजैनों ने आप से उपद्रव दूर करने की प्रार्थना करी। कृपा-सिन्धु गुरु महाराज ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति से प्लेग के प्रकोप को शांत किया। आपके इस चमत्कार को देखकर अनेक अजैन महेश्वरियों ने जैनधर्म स्वीकार किया इस के अतिरिक्त आपने एक लड़का तथा एक लड़की को दीक्षा दी।

एक समय आप अजमेर पधारे, उस समय यहां के चौहान राजा अर्णोराज [आना]थे आपका प्रवेश उत्सव राजा जी की तरफ से बड़ी धूमधाम से किया गया था। श्रीसंघ के अनुग्रह से उक्त राजाजी ने जैनमंदिरों के लिये स्थान भी प्रदान किये थे। फिर दूसरी बार जब आप अजमेर पधारे तो मंदिरों की

नींव भी आपके सामने ही रक्खी गई थी अनुक्रमे विहार करते २ आप नरवर गये फिर वहां से त्रिभुवनगिरि पधारे, यहां पर कुमारपाल राजा+ राजा को धर्मोपदेश सुनाया ।

कुमारपाल राजा + कुमारपाल अणहिलवाड़ा के सोलंकियों में सब से प्रतापी हुआ, परन्तु राज्य पाने से पहले का समय इसने बड़ी ही आपत्ति में व्यतीत किया क्योंकि सिद्धराज जयसिंह इसको मरवाना चाहता था, जिस से यह भेष बदलकर प्राण बचाता फिरता था । इसने अजमेर के चौहान राजा अर्णोराज (आना) पर चढ़ाई कर विजय प्राप्त की, मालवा के राजा वल्लाल को मारा और कोंकण के शिलारावंशी राजा [मल्लिकार्जुन] पर दो बार चढ़ाई की और दूसरी चढ़ाई में इस को विजय प्राप्त हुई । यह राजा बड़ा ही प्रतापी, देशविजयी और राजनीतिनिपुण था । इसके राज्य की सीमा दूर तक फैली हुई थी और मालवा तथा राजपूताना के कितनेक हिस्सों पर भी इसका अधिकार था । इसने हेमाचार्य के उपदेश से जैनधर्म स्वीकार किया था । वि० सं० ११९९ से १२३० तक इसने राज्य किया । इस के पीछे इस के सब से बड़े भाई महीपाल का पुत्र अजयपाल राज्यसिंहासन पर बैठा ।

(सिरोही राज्य का इतिहास पृष्ठ १३६-३७)

अनुक्रमे विहार करते २ अनेक भव्यजीवों को जैनधर्म का उपदेश देते हुये और जीव दया की उद्घोषणा करते हुये आप विक्रम संवत् १२११ में अजमेर पधारे परन्तु भावी प्रबल थी अपना अन्त समय निकट जानकर आपने जिनचंद्रसूरि × को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया और स्वयं संघ व्यवस्था

जिनचंद्रसूरि × (द्वितीय जिनचंद्रसूरि) आप का जन्म विक्रम स० ११९१ के भाद्रपद सुदि ८ के दिन हुआ १२११ बैशाख सुदि ५ को सूरि पद पर बैठे तथा १२२३ में भाद्रपद वदि १४ को दिल्ली (कुतुब) में इनका स्वर्गवास हुआ । आपको दादा साहिब जिनदत्तसूरि जी महाराज ने अपने हाथ से सवत् १२११ में वैशाख सुदि ५ के दिन विक्रमपुर नगर में आचार्य पद पर स्थापित किया तथा नन्दी महोत्सव रासल ने किया था । ये दोनों ही आचार्य महाप्रतापी हुए थे यहा तक कि वर्त्तमान में भी अपने भक्तों को प्रत्यक्ष चमत्कार दिखा रहे हैं ॥

कर परमार्थतत्व और आत्मरमणता में लीन होकर सर्व जीवों से खमत खामना कर पंच परमेष्ठि मंत्र का आराधन करते हुये संवत् १२११ आषाढ़ सुदि ११ गुरुवार को ७६ वर्ष का आयु पूर्ण करके देवलोक को सिधारे। संघ में हाहाकार मच गया मानो जैन जाति का एक चमकता हुआ तारा लोप हो गया।

मेवाड़ में एक शिलालेख सं० १२२६ का मिला है जिस मे जिनचंद्रसूरिजी का उल्लेख है दिल्ली में उस समय चौहान पृथ्वीराज द्वितीय का राज्य था। इसको पृथ्वीदेव तथा पृथ्वीभट्ट भी कहते थे विक्रम सं० १२२६ में इसका देहान्त हुआ॥

श्रीः

जिनदत्तसूरि और जैनधर्म प्रचार

स्वर्गीय मिस्टर वीरचंद राघवजी गांधी ने एक जगह लिखा है कि जैनधर्म दुनिया में सब से प्राचीन प्रचारकधर्म है। इस में संदेह नहीं कि इस दयामूल धर्म के प्रचारक भाव के अनेक पुरावे (सुबूत) मिलते हैं। ओसवाल श्रीमाल जातियां तो मानो इस भाव की जीती जागती यादगारें हैं। ओसवाल कल्पवृक्ष रूपी गाछ के लगाने वाले तो उकेश गच्छे रत्नप्रभसूरि (वीर सं० ७०) थे किन्तु पश्चात् जिनवल्लभसूरि तथा

जिनदत्तसूरि अनेक जैनाचार्य विक्रम की १६ वीं शताब्दि तक इस गाछ को सींचते रहे हैं। यहां हम यह दिखाने की कोशिश करेंगे कि हमारे चरित्रनायक जिनदत्त सूरि जी ने किन २ गोत्रों की ओसवाल जाति में स्थापना की है। आपने वि०सं० ११७० से वि० सं० १२१० तक राजपूत महेश्वरी, वैश्य और ब्राह्मण वर्णों को जैनधर्म का उपदेश देकर अनेक श्रावक बनाये थे, इस बात का प्रमाण निम्नलिखित प्राचीन गुरुदेव के स्तोत्र की गाथा से मिलता है:—

पड़ वड़े गामें ठाम ठामें भूपती प्रति बोधिया ।
इण लब्धि ऊपर लहस तीसा कडू मे श्रावक किया ॥
परचा देखाड्या रोग काढ्या लोक पायल संतए ।
जिनदत्त सूरि सूरीस सद्गुरु सेवतां सुख संतए ॥

वि० सं० ११७० में श्रीजिनदत्तसूरिजी ने चंदेरी के राजा खरहत्तसिंह राठोड़ को जैनधर्म का उपदेश देकर श्रावक किया। उक्त खरहत्त-सिंह के चार पुत्र थेः—

१--अंबदेव—इस की संतान चोरवेर-डिया [चोरडिया] कहलाये।

२--नींवदेव—इस की औलाद भटनेरा, चौधरी कहलाये।

३--भैंसाशाह—इस की संतान में साह सुख्य [सावन सुखा] गोलेच्छा, बुच्चा तथा पारख नख हुए।

४--पासु—इस के वंशज पारख कह लाये।

वि सं० ११७३ में आप ने सिद्धपुर पाटन(जैसलमेर) के भाटी राजपूत सागर

रावल के राजकुमार श्रीधर और राजधर को श्रावक कर के भराडशाली (भनसाली) गोत्र की स्थापना की ।

भंसालियों में थेरूशाह भनसाली एक प्रभाविक श्रावक हुआ है शत्रुञ्जय रास के कर्त्ता समयसुन्दर इन के समकालीन थे ।

एक भनसाली बीकानेर के राज्य में देशनोक गांव में जाकर बसा उसका रंग भूरा था इस कारण इस का नाम भूरा पड़ गया । उसके वंशज अब भूरा कहलातेहैं ।

सं० ११७५ में सिंध देश में एक भाटी राजपूत राजा अभयसिंह नामक को आप ने श्रावक किया और आयरियागोत्र की स्थापना करी उक्त राजा की संतान में एक

लूणा नाम का व्यक्ति हुआ जिस की औलाद् लुणावत कहलायी।

सं० ११७७ में पंवार राजपूत जीवन और सच्चू को जैनधर्म अंगीकार कराकर आपने बाफनागोत्र की स्थापना करी। नाहटा बाफनाओं की एक नख है।

लखनऊ के प्रख्यात राजा बच्छराज नाहटा सरदार थे।

वि सं० ११८१ में आप ने रतनपुर के सोनगरा चुहान राजा धनपाल को जैनधर्म का उपदेश देकर रतनपुरागोत्र की स्थापना की। इस गोत्र की मशहूर नखें कटारिया कोचेटा, नराण गोता, सापद्राह, भलारि-सया, सांभरिया, रामसैन्या, बलाई और बोहरा हैं।

सं० ११८५ में पातीनगर में राजपूत काकू और राका को श्रावक कर के रांका गोत्र की स्थापना की। रांको में सेटिया, काला, गोरा, दकादि, मशहूर नखें हैं।

सं० ११८७ में आप ने पूगल के भाटी राजपूत राजा सौनपाल तथा उसके पुत्र के लंगादे को जैनधर्म का अनुयाई कर के राखेचागोत्र की स्थापना करी। राखेचा पुगलियें भी कहलाते हैं।

सं० ११६२ में मुलतान के राजा के दीवान मूधड़ा जाति के महेश्वरी हाथीशाह के पुत्र लूणा को जैनधर्म का अनुरागी कर के लूणियागोत्र स्थापित किया।

जिनदत्तसूरि और द्वितीय गच्छभेद ।

---o---
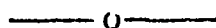
आप के समय में श्रीजिन वल्लभसूरि जी के शिष्य जिनशेखर आचार्य ने सं० १२०४ में रुद्रपल्लीयशाखा की स्थापना की ।

जिन शेखराचार्य विजयचंद्रसूरि अभय-देवसूरि (द्वितीय) देवभद्रसूरि जिनप्रभ (सं० १४००) सिंह तिलक, गुणाकार तथा देविंद्र मुनि इत्यादि इस शाखा में प्रभाविक आचार्य हुए हैं ।

कीर ग्राम में जो कोटकांगड़े से ३० मील पूर्व की ओर है एक शिलालेख मिला

है, जो इस शाखा से सम्बन्ध रखता है इस शिला लेख का भावार्थ यह है:—

सं० १२९६ फागरा वदि ५ रविवार को कीर ग्राम में ब्रह्मक्षेत्र गोत्री भानू के बेटे दोल्हण और आल्हण ने अपने बनवाये हुए महावीर स्वामी के मंदिर में महावीर स्वामी के मूल बिम्ब की प्रतिष्ठा कराई जिनवल्लभ सूरि संतानिय रुद्रपल्लीगच्छ वाले अभय-देव सूरि के शिष्य देवभद्रसूरि ने प्रतिष्ठा की ।

जिनदत्तसूरि और उनका परिवार।

जिनदत्तसूरि के परिवार में अनेक साधू और साध्वियें उपस्थित थीं। जिनमें से मुख्य २ की अनुक्रमणिका निम्न दीजाती है।

साधुवर्ग।

१ जिनचंद्र सूरि जो मणिधारी नाम से प्रसिद्ध हैं।	६ ब्रह्मचंद्र गणी
	७ विमलचंद्र ,,
	८ वरदत्त ,,
२ जिनशेखर	९ भुवनचंद्र ,,
३ जिनरक्षित गणी	१० चरण ,,
४ शालीभद्र ,,	११ रायचंद्र ,,
५ स्थिरचंद्र ,,	१२ मणिभद्र ,,

इनके अतिरिक्त जयदत्त, जयदेव आचार्य और जिन प्रभाचार्य ने आप के हाथ से दीक्षा ग्रहण करी थी।

साध्वीवर्ग ।

१ श्रीमति
२ जिनमति
३ पूर्णमति
४ जिनश्री
५ ज्ञानश्री

यह ५ साध्वियें महत्तरा पद से विभूषित थीं ।

जिनदत्तसूरि और साहित्यसेवा।

आप जैसे प्रभावशाली थे वैसे ही आप विद्वान् भी थे। आप ने भिन्न २ विषयों पर अनेक ग्रंथ तथा टीकाएं रची हैं आपके ग्रंथों के अवलोकन से विदित होता है कि आपकी लेखनशैली मनोहर और आकर्षक है आप को संस्कृत और प्राकृत गद्य पद्य पर पूरा पूरा अधिकार था। खेद का विषय है कि आपकी सब रचनाओं को आधुनिकशैली के अनुसार प्रकाश करने का अभी तक यथासाध्य उद्यम नहीं हुआ है। जिस से सर्वसाधारण को लाभ होता

आप की रचनाओं की सूची (जहां तक हमें अवगत हुई है) नीची दी जाती है।

१ उत्सूत्र पटोद्‌घट्टन कुलक
२ गणाधर सार्धशतक [श्लोक संख्या २८५]
३ गुरुपारतंचत स्तोत्र
४ तंजयस्तोत्र
५ पद्‌स्थान विधि
६ पार्श्वनाथस्तोत्र
७ प्रबोधोदय ग्रंथ
८ महरहियस्तोत्र
९ संदेह दोलावली [श्लोक संख्या १६७]
१० सिग्यमवहर स्तोत्र
११ चार्चरी प्रकरण
१२ उपदेशकुलक
१३ अवस्थाकुलक [श्लोक संख्या ७६]

१४ चैत्यवंदनकुलक

१५ कालस्वरूप द्वात्रिंशिका

१६ अध्यात्मदीपिका

१७ पट्टावली

संवत् ११६० में वीर गणिरचित पिंड निर्युक्तिवृत्ति का अनहिलवाड़ा (पाटन) में स्थापित किया ।

गुरु-भक्ति

❋ मंगलाचरण ❋

सर्वमंगलमांगल्यं । सर्वकल्याणकारणं । प्रधानं सर्वधर्माणां । जैनं जयतु शासनं ॥ १ ॥ मंगलम् भगवान वीरो । मंगलं गौतमः प्रभुः । मंगलंस्थूल भद्राद्या । जैनो धर्मोस्तु मंगलं ॥ २ ॥ शिवमस्तु सर्व जगतः । पर-हितनिरता भवंतु भूतगणाः । दोषाः प्रयान्तु नाशं । सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥३॥ दासा-नुदासा इव सर्वदेवा । यदीय पादाब्जतले लुठन्ति । मरूस्थली कल्पतरुः सजीयात् । युगप्रधानो जिनदत्त सूरिः ॥ ४ ॥ सिद्धांत

सिंधुर्जगदेकबंधु । युगप्रधानः प्रभुतांदधानां। कल्याणकोटी प्रकटीकरोतु । सूरीश्वरो श्री जिनदत्तसूरिः ॥ ५ ॥ इति ॥

सिरि सुयदेव पसाय करे। गुरु सिरिजिन-दत्तसूरि । वंदिसु खरतर गछरयण । सूरि जेम गुणपूरि ॥१॥ संवत् इग्यारै वरसै । बत्तीसैजसु जम्म । वाछिग संत्रिपिता जणण । वाहड़ि देव सुरम्म ॥ २ ॥ इकतालै जिणवइ गहिय । गुणहत्तरै जसुपाट। वइसाखां वदि छठि दिन । पइठण में सुरथाट ॥ ३ ॥ अंवड़ सावइ करतलि हिय । सोवन अक्षर अंव । जुगप्रधान जग पयड़ियोए । सिरि सोहे पड़िविंब ॥ ४ ॥ जिण चउसठिजोगिण जणिय । खित्तपाल वावन्न । साइण डाइण विज्जुलिय । पुहविहनामनयन्न ॥ ५ ॥ सुरमंत वलकर सहिय । साहिय जिम

धरणिंद । सावइ साविय लक्ख इग । पड़ि बो हिय जिण बिंब ॥६॥ अरि करि केसरि उठदल । चउविह देव निकाय । आण नलोपै कोई जुग । जसु प्रणमें नरराय ॥ ७ ॥ संवत बारइग्या-रसमें । अजयमेर पुर ठाण । इग्यारासि आ-साढ़ सुदि सगपत्तन सुह झाण ॥ ८ ॥ सिरि जिनबल्लह सूरि पए । सिरि जिनदत्त मुणिंद-विघ्नहरण मंगल करण । करो पुण्य आणंद ॥ ९ ॥ इति श्रीजिनदत्त सूरि ज्यष्टकं ॥

सदगुरुजी थे सांभलो । श्रीजिनदत्तसूरी सहो । सेवक ने सांनिध करो । पूरो मन-हजगीसहो ॥ १ ॥ [दोलति दोहो दादाजी संपति दोहो] दौलत दो गुरु माहरा । थांहरा विरुद अनेकहो । तो सेव्यां संकट टलै । एहीज दादा ताहरी टेक हो ॥ २ ॥ दौ० ॥

जीती चौसठ जोगिणी । बसकीया बावन वीर हो । सिंध मांहे तें साधीया । पंचनदी पंचपीरहो ॥ ३ ॥ दौ० ॥ पड़िक सणां मांहे वीजली । वलीय वलो झच कायहो । थे मंत्री राखी तिका । तूठा वरदे जाय हो ॥ ४ ॥ दौ० ॥ उच्छव करता उच्च में । मूंओ मुगलरो पूत हो । जापकरी जीवाड़ीयो संघ मांहे राख्यो दादे सुत हो ॥५॥ दौ० ॥ बड़नगररे ब्राह्मणें । देहरै धरी मृत्यु गाय हो । पंच परमेष्टि विद्या वलै । पिसुण लगाया दादे पाय हो ॥ ६ ॥ दौ० ॥ विक्रमपुर व्यापी मरी । तैं दूर कीया सऊ दुःखहो । परवार पिण पोतै कीयो । सऊनें दीधौ दादे सुःखहो ॥७॥ दौ० ॥ अंवड़ हाथे अख्यरै, थे प्रगव्या ततखेवहो । जुगप्रधान जग तुं जयो, आखे अंविका देवहो ॥८॥ दौ०

थांभोवज्र विदारनें । पोथी परगट कीध हो। विद्या सोवन अत्तरें।उज्झेणी मांहेलीध हो ॥ ६ ॥ दौ० ॥ इम विरुद घणाछे ताहरा कहितां नावै पार हो । भाग संजोगै दादौ भेटीयो, अड़वड़ीयां आधार हो ॥ १० ॥ दौ० उंछुं सेवक ताहरौ, थे आपो धनरिद्ध हो। भुवन कीरति सुप सावलै, लाभ उदैसुख सिद्ध हो ॥ ११ ॥ दो० इतिश्री दादाजी गीतं

(राग प्रभाती)

चरण की चरण की चरण की । वारी जाऊं गुरु राय चरण की (वा०) श्री जिन-दत्त सूरीसर सदगुरु। सफल घड़ी सेवाचरण की ॥ (वा०) ॥ १ ॥ प्रथम मंगल गुरुराय की सेवा। अशुभ करम सब हरणकी (वा०)

॥ २ ॥ दालिद्रभंजण अरि सब गंजण। पगपग सानिध करणकी ॥ (वा०) ॥ ३ ॥ मोह नहीं परवाह अनेरी । शरनग्रही इन चरण की ॥ (वा०) ॥ ४ ॥ श्री जिनहर्ष तुम चरणां के दासा । आशा पूरो सुख करण की (वा०) ॥ ५ ॥

इतिश्री दादाजी स्तवनम् ।

भूलसुधार—पृष्ट २ पंक्ति ७ में विद्वान् के स्थान में विद्यमान् छप गया है। कृपया पाठक स्वयं ठीक करलें।